6

परिवर्तन

पाठ-प्रवेश

आजकल परिवारों में 'तेरे-मेरे' की भावना घर कर गई है, जिससे घर में बड़े-बुजुर्गों को समुचित सम्मान नहीं मिल पाता। बड़े उनको अपनी स्वतंत्रता में बाधक लगते हैं। वे जो कुछ करना चाहते हैं, नहीं कर पाते। कुछ बुजुर्ग टोकते भी नहीं तो भी स्थिति अनचाही-सी रहती है। इस कहानी में भी एक ऐसे ही बुजुर्ग हैं, जिन्होंने अपने परिवार के साथ रहने की बजाय अकेला रहना उचित समझा।

"मैं सोच रहा था कि इस शनिवार-इतवार को जाकर बाबू जी को ले आता।" प्रसाद जी ने झिझकते हुए कहा।

"ओह नो!" बच्चों ने 'कोरस'[1] में कहा, तो माँ ने उन्हें आँखों से डपट दिया और बोलीं–"इतनी जल्दी?"

"जल्दी कहाँ? उन्हें गए दो महीने से ऊपर हो गए हैं। इतने दिन वे बेटी के यहाँ कभी रहे हैं?"

फिर बोले, "बाबू जी तो पुराने ज़माने के व्यक्ति हैं। उनके लिए ये बातें बहुत महत्व रखती हैं। अब इस उम्र में यह आशा करना कि वे अपनी सोच बदल लेंगे, बेकार[2] है।"

बच्चों ने फिर बहस नहीं की। चुपचाप खाकर उठ गए। पत्नी ने मेज़ पर बिखरे समानों को समेटते हुए पूछा–"सुनिए, क्या इसी हफ़्ते जाना बहुत ज़रूरी है?" वे प्रश्नार्थक नज़रों से पत्नी को देखते रहे।

"नहीं, मैं सोच रही थी, बच्चे थोड़ा आराम कर लेते। अभी-अभी तो बेचारे मुक्त हुए हैं।"

"बच्चों को आराम करने के लिए कौन मना कर रहा है?"

"आप समझते नहीं हैं। बड़े-बुजुर्ग घर में होते हैं, तो थोड़ा बंधन तो हो ही जाता है। बच्चों के हँसने-बोलने पर, खाने-पीने पर बंदिश[3] लग ही जाती है।"

"तो तुम चाहती हो, बाबू जी को वहीं रहने दूँ?" उनका स्वर थोड़ा कड़ा हो गया।

पत्नी ने नरमी से कहा–"नहीं, मेरा मतलब था, आठ-दस दिन और सही।"

प्रसाद जी को वितृष्णा[4] और खीझ हो आई। अपने आपको वे पहली बार

शब्दार्थ

1. समूहगान; 2. निरर्थक; 3. बंधन; 4. व्याकुलता;

6

परिवर्तन

पाठ-प्रवेश

आजकल परिवारों में 'तेरे-मेरे' की भावना घर कर गई है, जिससे घर में बड़े-बुजुर्गों को समुचित सम्मान नहीं मिल पाता। बड़े उनको अपनी स्वतंत्रता में बाधक लगते हैं। वे जो कुछ करना चाहते हैं, नहीं कर पाते। कुछ बुजुर्ग टोकते भी नहीं तो भी स्थिति अनचाही-सी रहती है। इस कहानी में भी एक ऐसे ही बुजुर्ग हैं, जिन्होंने अपने परिवार के साथ रहने की बजाय अकेला रहना उचित समझा।

"मैं सोच रहा था कि इस शनिवार-इतवार को जाकर बाबू जी को ले आता।" प्रसाद जी ने झिझकते हुए कहा।

"ओह नो!" बच्चों ने 'कोरस'[1] में कहा, तो माँ ने उन्हें आँखों से डपट दिया और बोलीं–"इतनी जल्दी?"

"जल्दी कहाँ? उन्हें गए दो महीने से ऊपर हो गए हैं। इतने दिन वे बेटी के यहाँ कभी रहे हैं?"

फिर बोले, "बाबू जी तो पुराने ज़माने के व्यक्ति हैं। उनके लिए ये बातें बहुत महत्व रखती हैं। अब इस उम्र में यह आशा करना कि वे अपनी सोच बदल लेंगे, बेकार[2] है।"

बच्चों ने फिर बहस नहीं की। चुपचाप खाकर उठ गए। पत्नी ने मेज़ पर बिखरे समानों को समेटते हुए पूछा–"सुनिए, क्या इसी हफ़्ते जाना बहुत ज़रूरी है?" वे प्रश्नार्थक नज़रों से पत्नी को देखते रहे।

"नहीं, मैं सोच रही थी, बच्चे थोड़ा आराम कर लेते। अभी-अभी तो बेचारे मुक्त हुए हैं।"

"बच्चों को आराम करने के लिए कौन मना कर रहा है?"

"आप समझते नहीं हैं। बड़े-बुजुर्ग घर में होते हैं, तो थोड़ा बंधन तो हो ही जाता है। बच्चों के हँसने-बोलने पर, खाने-पीने पर बंदिश[3] लग ही जाती है।"

"तो तुम चाहती हो, बाबू जी को वहीं रहने दूँ?" उनका स्वर थोड़ा कड़ा हो गया।

पत्नी ने नरमी से कहा–"नहीं, मेरा मतलब था, आठ-दस दिन और सही।"

प्रसाद जी को वितृष्णा[4] और खीझ हो आई। अपने आपको वे पहली बार

शब्दार्थ

1. समूहगान; 2. निरर्थक; 3. बंधन; 4. व्याकुलता;

इतना असहाय अनुभव कर रहे थे। कितनी हसरत से, कितनी उमंग से वे बाबू जी को यहाँ लाए थे। यूँ तो माँ की मृत्यु के बाद ही उन्हें लाने का मन था, पर साल भर तक बाबू जी वहाँ से हिलने के लिए राज़ी नहीं हुए। प्रसाद ही दौड़-दौड़कर वहाँ जाते रहे, बाबू जी की खोज-खबर लेते रहे। हर बार बाबू जी पहले से ज़्यादा थके हुए, टूटे हुए नज़र आए। यह स्वाभाविक भी था। फिर बाबू जी के मित्र भी कहने लगे–"बेटा, अब अपने पिता को अपने पास ही रखो। बुढ़ापे का शरीर है। देखभाल की ज़रूरत पड़ती है।"

माँ की बरसी के बाद बाबू जी की एक नहीं सुनी गई। ज़िद करके वे लोग उन्हें अपने साथ भोपाल ले आए। बेटे के साथ-साथ बहू और बच्चों ने भी बहुत मनुहार[5] की थी, तभी वे राज़ी हुए थे। पर बहुत जल्दी ही एहसास होने लगा कि स्वागत का यह भाव धीरे-धीरे तिरोहित[6] होने लगा है।

यूँ तो बाबू जी बहुत शांत प्रकृति के व्यक्ति हैं। उनकी ज़रूरतें भी बहुत थोड़ी-सी हैं। इधर-उधर दखलंदाज़ी करने की आदत भी नहीं है। फिर भी वे हाड़-मांस के जीव तो हैं। घर में उनकी उपस्थिति महसूस की ही जाती थी। सबसे बड़ी समस्या थी सोने की। इससे पहले बाबू जी जब भी आए, माँ साथ में होती थीं। वे दोनों एक-दूसरे का ख्याल रख लेते थे। आठ-दस दिन की बात होती थी। कुछ न कुछ व्यवस्था हो ही जाती थी। थोड़ी-सी असुविधा भी तब नहीं अखरती थी। बच्चे छोटे थे, तो दादा-दादी के साथ खुशी से 'एडजस्ट' हो जाते थे। बल्कि तब तो दोनों में होड़ लगा करती थी कि कौन किसके पास सोएगा! पर अब स्थितियाँ बदल गई थीं। बच्चे बड़े हो गए थे।

दोनों का अपना-अपना कमरा था। तीसरा प्रसाद दंपती का था। बाबू जी की व्यवस्था हॉल में की गई। तीन कमरों वाले घर में भी बाबू जी के लिए निरापद[7] बस यही स्थान था। वे दीवान पर आराम से सो जाते थे, पर उनके साथ उनका पानी, दवाइयाँ, टोपी, मफ़लर, टॉर्च, जूते, चश्मा आदि सभी रखे रहते थे। सुबह नौकर के आने तक बाहर का कमरा बाहरवालों के बैठने योग्य नहीं रहता था।

सबसे बड़ी समस्या थी 'टॉयलेट' की। बुढ़ापे के कारण उन्हें रात में कई बार उठना पड़ता था। तो उन्हें पप्पू के कमरे का ही आश्रय[8] लेना पड़ता था।

फिर प्रसाद जी ने छोटी बहन को चुपचाप पत्र लिखा कि कुछ दिनों के लिए बाबू जी को ले जाए। बच्चों की परीक्षा के बाद वे खुद ही उन्हें ले जाएँगे।

वे हर दस-पंद्रह दिन बाद फ़ोन करके बाबू जी की कुशलक्षेम[9] पूछ लेते थे, पर उन्होंने बाबू जी से बात कभी नहीं की। उन्हें डर लगा रहता कि कहीं उन्होंने आने की ज़िद पकड़ ली तो वे मना नहीं कर पाएँगे। उन्होंने फ़ोन किया तो माया के पति सुरेश ने उठाया था। कुशलक्षेम के बाद प्रसाद जी ने कहा–"मैं अगले रविवार को आ रहा हूँ। बाबू जी से कहिए, तैयार रहें।"

"भाई साहब, आपको माया ने बताया नहीं क्या? बाबू जी तो कब के चले गए।"

"चले गए? कहाँ?"

"अपने घर, जौरा। मैं खुद ही तो छोड़ आया था। हाँ, शायद बाबू जी ने मना किया था इसीलिए माया ने आपको बताया नहीं होगा।" वे कुछ देर के लिए स्तब्ध[10] रह गए।

शब्दार्थ

5. विनती; 6. गायब; 7. आपत्तिरहित, निर्विघ्न; 8. सहारा; 9. हाल-चाल; 10. सन्न, चकित

"आप ज़्यादा परेशान न हों, भाई साहब! ये पुराने लोग हैं न, दूसरी जगह एडजस्ट नहीं हो पाते। उन्हें अपना घर ही अच्छा लगता है।"

उलाहनों[11] के उत्तर में माया ने कहा–"भाई साहब, आप कुछ मेरी मजबूरी का भी तो अंदाज़ा लगाइए। मैंने बहुत मना किया, पर जब बिलकुल ही ज़िद पर आ गए तो उन्हें असली बात बतानी ही पड़ी।"

"क्या?"

"यही कि बच्चों की परीक्षा होने तक आपको यहीं रहना है।"

"तब तो शायद तुमने यह भी बता दिया होगा कि मैंने ही तुमसे कहा था कि उन्हें ले जाओ।"

"भाई साहब, यह तो मैं कभी नहीं बताती, पर उन्होंने खुद ही अंदाज़ा लगा लिया। उसके बाद तो वे पल भर भी यहाँ रुकने को राज़ी नहीं हुए। बोले, कि ईश्वर की कृपा से अभी मेरा घर सलामत है। मुझे वहीं पहुँचा दो। फिर ये खुद जाकर छोड़ आए थे। ज़रूरी व्यवस्थाएँ भी कर आए थे।"

इसके बाद कहने को कुछ था ही नहीं। उन्होंने चुपचाप रिसीवर रख दिया और उस घड़ी को कोसते रहे, जब उन्होंने बाबू जी को माया के साथ भेजा था।

पूरे हफ़्ते वे गुमसुम बने रहे। फिर एक शाम एक्सप्रेस से चल ही पड़े। मुँह-अँधेरे मुरैना पहुँचे। वहीं से जो पहली बस मिली, उससे जौरा के लिए चल पड़े।

घर पहुँचकर देखा, सामने वाले आँगन में चारपाइयाँ बिछी हुई हैं और बाबू जी की मित्र मंडली चर्चा में मशगूल[12] है।

उन्होंने जाते ही सबके पाँव छुए, आशीर्वाद लिया। फिर वे सब उठ खड़े हुए–"पंडित जी, अब आप बेटे की खातिर कीजिए, हम लोग चलते हैं।"

"अरे, आप लोग बैठिए ना, मैं क्या कोई मेहमान हूँ? यह तो मेरा घर है। आप लोग इतमीनान से[13] बैठें।"

तभी किसना ने आकर उनके पैर छुए।

"कैसे हो किसना?"

"बस, बाबू जी की कृपा है।" उसने गद्‌गद भाव से कहा।

"बाबू जी की कृपा का बखान फिर कर लेना। पहले जाकर भैया के लिए कुछ नाश्ता लेकर आ।"

उन्होंने सोचा–'नाश्ता आने से पहले नहा लिया जाए।' नहाने के बाद आँगन में बँधी रस्सी पर तौलिया फैलाते हुए उन्होंने देखा कि एक महिला ने उन्हें देखते ही लंबा-सा घूँघट खींच लिया है।

"किसना की बहू होगी। वे लोग अब यहीं रहने लगे हैं न। मेरे लिए दो रोटियाँ डाल देती है। चौका-बासन, झाड़ू-बुहारी कर देती है। काम भी हो जाता है और साथ भी। तुम लोगों को भी फ़िक्र नहीं रहेगी कि बाबू जी अकेले पड़े हैं।"

"लेकिन आपको यहाँ अकेले रहने कौन देगा? मैं तो आपको ले जाने के लिए ही आया हूँ।" "मुझे लाने-ले जाने की ज़रूरत नहीं है बेटा! मेरी जब मर्ज़ी होगी, चला आऊँगा। पर जब तक मेरे हाथ-पाँव चल रहे हैं, मुझे यहीं रहने दो। यहाँ मेरे दोस्त हैं, नाते-रिश्तेदार हैं, पास-पड़ोस है। दरवाज़े पर खड़ा भी हो जाता हूँ तो दस लोग 'जय रामजी' करते निकल जाते हैं। वहाँ तो समय काटे नहीं कटता। तुम सब लोग अपने-अपने काम में व्यस्त रहते हो।"

बाबू जी की बात एकदम सही थी। उसका कोई तर्कसंगत[14] उत्तर प्रसाद जी सोच ही रहे थे कि बाबू जी ने कहा–"एक बात और है बेटा! तुम्हारी माँ तो नहीं रहीं। पर जब तक मैं हूँ, तब तक तो लड़कियों का पीहर[15] बना रहे। कभी उनका मन हुआ तो आने का एक घर तो हो।"

'क्या वे लोग मेरे घर नहीं आ सकतीं?' उन्होंने कहना चाहा, पर अपनी बात का खोखलापन खुद ही उनकी ज़बान पर ताला लगा गया। उन्हें याद आया कि जब-जब बहनों को बुलाना चाहा, घर में समस्याओं का एक अंबार उठ खड़ा हुआ था। प्रसाद जी ने विषयांतर[16] करते हुए कहा–"बाबू जी, आपने इस छोकरे को जगह दे तो दी है, बाद में कहीं लफड़ा[17] न हो जाए।"

"कैसा लफड़ा?"

"बाद में अगर इसने जगह खाली करने से इनकार कर दिया तो?"

"बाद में मतलब?"

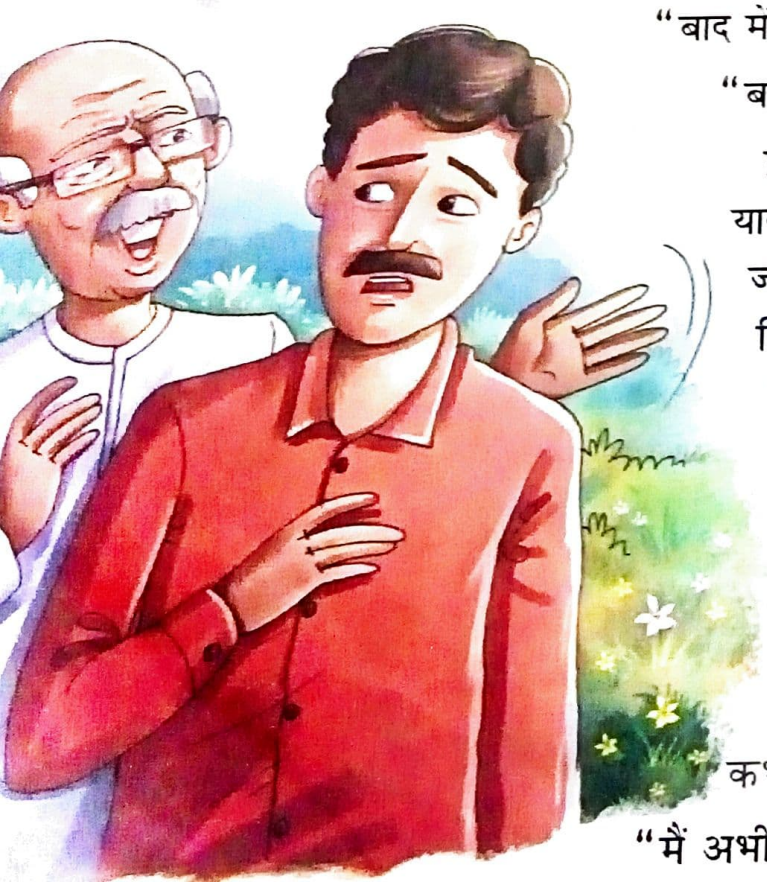

प्रसाद जी शर्म से गड़ ही गए। अपनी व्यग्रता[18] में उन्हें याद ही नहीं रहा कि वे क्या कह रहे हैं? लेकिन बाबू जी ने इसे बड़े सहज भाव से लिया। वे बोले–"उसकी चिंता अभी से क्यों? बाद में तो किसी को यहाँ रहना नहीं है। मकान तो बेचना ही है। जो भी खरीदेगा, वही किसना से भी निपट लेगा।"

अपनी शर्म से वे अब तक नहीं उबर पाए थे और बाबू जी ने जैसे स्पष्ट ही उस ओर संकेत कर दिया। इसलिए अपनी सफ़ाई देते हुए प्रसाद जी बोले–"बाबू जी, घर बेचने की बात तो मेरे मन में कभी उठी ही नहीं।"

"मैं अभी की बात नहीं कर रहा हूँ बेटे! अभी मेरे रहते तो कोई

भोपाल जाने से पहले तो इतनी अच्छी 'ऑफ़र' आई थी कि क्या बताऊँ। बड़ी मुश्किल से अपने को रोक पाया। यह तो कहो कि ईश्वर ने ही सद्‌बुद्धि दे दी थी, नहीं तो मेरी फ़ज़ीहत[20] ही थी।"

अंतिम बात कहते-कहते बाबू जी का स्वर भर्रा[21] गया था। इतनी देर से प्रसाद के मन में जो बात खदक[22] रही थी, उसे कहने का भी यही मौका था।

'पर आप यहाँ क्यों आ गए? सीधे भोपाल आ जाना था न!' प्रसाद जी ने कहना चाहा, पर उनकी आवाज़ गले में फँसकर रह गई।

फिर बाबू जी जैसे उनकी बात समझ गए। पीठ थपथपाकर सांत्वना के स्वर में बोले–"रात भर के जगे हो। थोड़ा आराम कर लो। मैं एक चक्कर बाज़ार का लगाकर आता हूँ। कौन-सी तरकारी खाओगे?"

–मालती जोशी

शब्दार्थ

20. दुर्गति; 21. भारी होना; 22. कुलबुलाहट

लेखिका-परिचय

मालती जोशी– प्रसिद्ध साहित्यकार एवं शिक्षाशास्त्री मालती जोशी का जन्म 9 जून 1934 को औरंगाबाद में हुआ था। इन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से अपनी पढ़ाई की। इनकी प्रमुख कृतियाँ–वो तेरा घर, ये मेरा घर, मोरी रंग दी चुनरिया, एक और देवदास, औरत एक रात है, पिया पीर न जानी, रहिमन धागा प्रेम का तथा परख आदि काफी चर्चित एवं लोकप्रिय हैं। इन्हें साहित्य के क्षेत्र में अहम योगदान के लिए 2018 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया।

अभ्यास

बात पाठ की

Oral Skills

मुख से

इन प्रश्नों के उत्तर बताइए।

क. बाबू जी को वापस ले आने की बात पर बच्चों ने क्या कहा?

ख. प्रसाद जी ने किस बात पर बाबू जी को पुराने ज़माने का कहा था?

ग. प्रसाद जी ने बाबू जी को किसके घर भेज दिया था?

घ. माया के पति ने क्या सूचना दी?

PAGE NO.
DATE / /

पाठ - 6

परिवर्तन

शब्दार्थ

कोरस - समूहगान

बेकार - निरर्थक

बंदिश - बंधन

वितृष्णा - व्याकुलता

मनुहार - विनती

तिरोहित - गायब

निरापद - आपत्तिरहित, निर्विघ्न

आश्रय - सहारा

कुशलक्षेम - हाल-चाल

स्तब्ध - सन्न, चकित

उलाहनों - शिकायत

मशगूल - मगन

इतमीनान - आराम से

तर्कसंगत - तर्क के आधार पर उचित और सही

पीहर - विवाहिता के माता-पिता का घर

विषयांतर - विषय या बात बदलना

लफड़ा - झगड़ा

व्यग्रता - बेचैनी

संबल - सहारा

फ़जीहत - दुर्गति

भर्रा - भारी होना

खदक - कुलबुलाहट

PAGE NO.:
DATE: / /

अभ्यास

प्र.1 निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखो :—

(क) प्रसाद जी स्वयं को असहाय क्यों अनुभव कर रहे थे ?

उत्तर प्रसाद जी ने अपने पिता जी को अपने घर में लाने का विचार किया तो उनकी पत्नी ने उन्हें थोड़े दिन के बाद लाने की सलाह दी। पत्नी की बात से वे व्याकुल हो उठे और अपने ही घर में अपने पिता को लाने की स्वतन्त्रता न पाकर स्वयं को असहाय समझने लगे।

(ख) बाबू जी के रहने की व्यवस्था किस कमरे में की गई थी? उसमे क्या असुविधा थी?

उत्तर बाबू जी के रहने की व्यवस्था हॉल में की गई थी। वे दीवान पर आराम से सो जाते थे. पर उनके साथ उनका पानी, दवाइयाँ, टोपी मफ़लर, टॉर्च, जूते, चश्मा आदि सभी रखे रहते थे। वहाँ की सबसे बड़ी समस्या 'टॉयलेट' की थी। बुढ़ापे के कारण उन्हें रात में कई बार उठना पड़ता था और हॉल मे 'टायलेट' नही होने के कारण उन्हें पप्पू के कमरे में जाना पड़ता था।

(ग) माया से किस अप्रत्याशित घटना को जानकर प्रसाद जी गुमसुम हो गए थे?

उत्तर माया द्वारा प्रसाद जी को पता चला कि पिताजी गाँव चले गए और उन्हें प्रसाद जी के कहने पर माया अपने घर लाई थी। यह बात पिताजी को पता चल गई है यह सब जानकर प्रसाद जी को अच्छा नहीं लगा और वे गुमसुम हो गए।

(घ) बाबू जी ने गाँव में रहने का निर्णय क्यों लिया?

उत्तर बाबू जी बहुत शांत प्रकृति के और समझदार व्यक्ति थे। वे प्रसाद जी की परेशानी को समझ गए और अपनी बेटी के घर रहना भी उन्हें अच्छा नहीं लग रहा था, इसलिए उन्होंने अपने गाँव वाले घर में रहने का निर्णय किया। वे किसी के ऊपर बोझ नहीं बनना चाहते थे। प्रसाद जी के साथ रहकर वे पूरे परिवार को परेशान नहीं देख सकते थे।

(ङ) 'मेरा मानसिक संबल है यह', बाबू जी के इन शब्दों में जीवन की सच्चाई छिपी थी। अपने विचार लिखें।

उत्तर- बाबूजी के लिए उनका घर उनका मानसिक संबल (सहारा) था। वहाँ उनकी पुरानी यादों के सहारे उनका मन लगा रहता था। मित्रों के साथ बातें कर मन बहल जाता था। सभी बुजुर्गों की दिनचर्या इन्हीं के आस-पास होती है। बुढ़ापे में गाँव, घर, मित्र-मंडली, नाती-पोते

बस इन्हीं के सहारे वे अपना जीवन जीते हैं। इसलिए आज की पीढ़ी को बुजुर्गों को समझना चाहिए. उनकी भावनाओं का मान रखते हुए उनको उनके घर से दूर रहने के लिए मजबूर नहीं करना चाहिए।

व्याकरण -

प्र.1 नीचे लिखे वाक्यों को अर्थ के आधार पर पहचानकर लिखिए।

क बाबू जी बहुत शांत प्रकृति के व्यक्ति हैं।
उत्तर विधानवाचक

ख इधर-उधर दखलदांजी करने की आदत भी नहीं है।
उत्तर निषेधवाचक

ग क्या इसी हफ़्ते जाना जरूरी है?
उत्तर प्रश्नवाचक

घ साल भर तक बाबू जी वहाँ से हिलने के लिए राज़ी नहीं हुए।
उत्तर निषेधवाचक

ङ. माया के पति सुरेश ने फोन उठाया।
उत्तर विधानवाचक